भारतीय संस्कृति में जीवन मूल्य और पुरुषार्थ चतुष्ट्य

डॉ. बदलू राम

सह आचार्य संस्कृत
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर

प्रस्तावना - भारतीय चिन्तन-प्रक्रिया ने मानव व जीवन मूल्यों को एक- दूसरे का पर्याय माना है। इन जीवन मूल्यों को धारण करके मनुष्य एक सफल सार्थक एवं आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकता है। इन्हीं मूल्यों को जीवन-मूल्य कहा जाता है, जिनको अपनाकर तथा जिनकी राह चलकर मनुष्य सही अर्थों में मनुष्य कहलाने का अधिकारी होता है नीतिशतम् में भर्तृहरि ने कहा है-

'येषां न विद्या न तपो न दानं ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः ।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूताः मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥[1]

मनुष्य-जीवन ईश्वर द्वारा प्रदत्त एक अमूल्य वरदान है। मानव जीवन की गतिविधियों एवं कार्य - प्रणाली को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए जिन मूलभूत तत्वों की आवश्यकता महसूस की जाती है, वे ही जीवन- मूल्य कहलाते हैं। जीवन मूल्यों को समझने के लिए जीवन और मूल्य की अलग-अलग व्याख्या आवश्यक है।

'जीव' धातु से ल्युट् (अन) प्रत्यय के योग से जीवन शब्द निप्पन्न होता है, जिसका अर्थ हैं, जीवन प्रद या प्राणप्रद । 'जीवन' शब्द से अभिप्राय है- 'जो मृत न हो' अथवा जो 'जड़ न हो' अर्थात् हम कह सकते हैं जो जीवित या चेतन है वही जीवन हैं। यदि हम वैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो मानव से लेकर पपु-पक्षियों में नहीं अपितु जड़ समझे जाने वाले पेड़-पौधों आदि में भी चेतना होती है, किन्तु व्यावहारिक रूप से 'जीवन' मानव-जीवन से ही होता है। बुद्धि जैसे श्रेष्ठ तत्व की प्रधानता होने के कारण मानव संसार के शेष जगत् से भिन्न एवं उच्च श्रेणी का है।

मूल् धातु ये 'यत्' प्रत्यय के योग से 'मूल्य' शब्द निप्पन्न होता है, जिसका सामान्य अर्थ है- कीमत | मूल्य शब्द अंग्रेजी भाषा के टंसमतम शब्द का पर्याय हैं जो कि मूलतः लैटिन भाषा के टंसमतम शब्द से निष्पन्न हैं जिसका अर्थ 'अच्छा' और 'सुन्दर' होता है। तात्पर्य यह है कि मूल्य शब्द के भावार्थ में 'शिवम्' और 'सुन्दरम' समाविष्ट रहते हैं अर्थात् वह विचार, धारणा, जीवन-दृष्टि जो समस्त मानव जाति के लिए मंगलमय है, पूर्ण सत्य हैं, पूर्ण शुभ हैं और परम सौन्दर्य से युक्त हैं, वहीं मूल्य हैं ।

आक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार- 'मूल्य मानव इच्छाओं की सन्तुष्टि करने वाली वस्तुएं हैं। इच्छा की पूर्ति से सुख होता हैं, इसीलिए सुखानुभूति में मूल्य की अनुभूति है ।

रामनाथ शर्मा के अनुसार 'मूल्य वह हैं, जिसका महत्व हैं, जिसको पाने के लिए व्यक्ति और समाज चेष्टा करते हैं, जिसके लिए वे जीवित रहते हैं और जिसके लिए वे बड़े से बड़ा त्याग कर सकते हैं।'

मानव-जीवन की समचेत अभिव्यक्ति समाज में मान्द जीवन-मूल्यों के आधार पर होती हैं। मनुस्मृति में जीवन मूल्य, शिक्षा-व्यवस्था, धर्म समाज राजनीति, अर्थव्यवस्था आदि विषयों का समावेश है। यहां केवल जीवन मूल्यों पुरुषार्थ-चतुष्ट्य पर ही केन्द्रित रहेगा।

भारतीय समाज आध्यात्मिकता प्रधान रहा है, जिसमें इन्द्रिय-संयम, चित्तवृत्ति, तप, त्याग आदि निवृत्तितमार्गीय साधनों पर अधिक बल दिया गया है। व्यक्तिगत आत्मिक शुद्धि, परस्पर-कल्याण व हित भावना, सामाजिक व

पारिवारिक सुख एवं शांति आदि महत्वपूर्ण जीवन-मूल्य हैं। भारतीय मूल्य- चिन्तन मूलतः ईश्वरवादी रही हैं। भारतीय मीमांसकों ने मूल्यों का चिन्तन 'पुरुषार्थ' के अन्तर्गत किया है। 'पुरुषार्थ' शब्द पुरूष और अर्थ के योग से निष्फल हुआ हैं। पुरुष का अभिप्राय हैं- 'जीवात्मा और अर्थ का तात्पर्य है - उद्देश्य | जीवात्मा का चरम लक्ष्य होता है, परमात्मा से सम्मिलन और इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु वह जिन उपायों को काम में लेता हैं, वे ही पुरुषार्थ कहलाता हैं। ये पुरुषार्थ चार है- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष | इन्हीं चार पुरुषार्थों का अनुगमन करके मानव लौकिक एवं पारलौकिक सुख-समृद्धि तथा मोक्ष को प्राप्त करता हैं। ये प्राचीनतम मूल्य ही हमारे शाश्वत जीवन-मूल्य, उद्देश्य और जीवन को समुचित रूप से जीने के प्रयत्न हैं। धर्म - भारतीय जीवन-दर्शन मुख्यत: धर्म पर आधारित है मानव जीवन का प्रमुख उद्देश्य लोकमंगल एवं शिवत्व से सम्बद्ध है और धर्म भी कल्याण एवं मंगल का प्रतिरूप होने के कारण हमें शोषण उत्पीड़न से मुक्ति दिलाता हैं तथा शाश्वत् सुख प्रदान करता है। हमारे समस्त धार्मिक ग्रंथों एवं वेदों में धर्म की व्याख्या साधारणतः कर्त्तव्यबोध एवं नैतिकता के संदर्भ में हुई है । 'मनुस्मृति' एक धर्मशास्त्र भी हैं। 'धर्मशास्त्रं तु वे स्मृतिः |" मनुस्मृति में धर्म का व्यापक अर्थ ग्रहण किया गया हैं। आत्मा के उपकारक, निःश्रेयससिद्धि अर्थात् मोक्ष प्राप्ति कराने वाले आचरण को धर्म कहते हैं। यह धर्म का मुख्य हैं। यही धर्म सार्वभौतिक, सार्वकालिक एवं सार्वजनीन हैं, जो त्याज्य नहीं हैं। इसी का प्रतिपादन करना धर्मशास्त्र का प्रमुख उद्देश्य है । मनु ने इस धर्म का वर्णन निम्न प्रकार किया है-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः । धीर्विद्या सत्यकक्रोधो दषकं धर्मलक्षणम् ॥

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ।

तस्माधर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत् । [2]

धर्म की उपर्युक्त व्याख्या का सार यही है कि धर्म उन मानवीय शक्तियों का पुंज है जो सत्य, सुन्द, सामर्थ्यवान् सार्वभौमिक तथा कल्याणकारी है। धर्म से अभिप्राय किसी विशेष ईश्वरीय मत से नहीं है, अपितु जीवन के एक तरीके या आचरण की एक संहिता से हैं, जो दिए व्यक्ति के रूप में तथा समाज के सदस्य के रूप में एक व्यक्ति के कार्यों को नियति अथवा नियमित करती हैं। पुरातन काल से ही धर्म जीवन-मूल्यों की निर्धारित करने वाली शक्ति रहा है।

अर्थ का साधारण अभिप्राय भौतिक जगत् की सुख सुविधाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति से है। यहां अर्थ का प्रयोग धन सम्पत्ति के सामान्य अर्थ में न करके जीवन मूल्यों के रूप में व्यापक परिप्रेक्ष्य में किया गया है। डॉ. राधाकृष्णन अर्थ को जीवन के लिए महत्वपूर्ण मूल्य मानते हैं। इस जीवन मूल्यों का उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ न होकर लोकमंगल होना चाहिए। इस संदर्भ में उनका कथन है- आर्थिक उपादान मानव जीवन का एक अत्यावश्यक तत्व हैं। सम्पत्ति में स्वतः कोई पाप नहीं है ठीक वैसे ही जैसे गरीबी में स्वतः कोई पुण्य नहीं हैं। किसी व्यक्ति के अपनी सम्पत्ति को बढ़ाने के प्रयत्नों से दूसरे लोगों को आर्थिक या नैतिक हानि पहुँचती हैं, जो आवश्यक यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या उपायों से ऐसी सम्पत्ति एकत्रित करना जिसके परिणाम ऐसे हों, भले है या नहीं। हिन्दु आचार शास्त्र का आग्रह है कि उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ न होकर समाधि-सेवा होना चाहिए। जीवन के विभिन्न मूल्यों की साधना समान रूप से होनी चाहिए, एक को गंवाकर दूसरों की नहीं । मनुष्य को अपनी सामर्थ्य के अनुसार सदा दान देते रहना चाहिए सदा या करते रहना चाहिए । उचित सम्पत्ति का संग्रहण करना चाहिए और इस प्रकार उचित ढंग से धन को तीन भागों में विभाजित करना चाहिए - संग्रहीत धन के एक तिहाई भाग से धर्म एवं अर्थ की प्राप्ति करनी चाहिए. एक तिहाई का व्यय काम के लिए करना चाहिए अर्थात् पवित्र काम संबंधी जीवन एवं धर्मविहित अन्य आनन्दों में लगाना चाहिए तथा एक तिहाई को ओर बढ़ाना चाहिये |

अतः अर्थ की अवधारणा के अन्तर्गत वे समग्र भौतिक वस्तुएँ आ जाती हैं जिनकी प्राप्ति से उसे प्रयोग में लाया जा सकता है। जिन्हें गृहस्थ के भरण पोषण परिवार की समृद्धि के लिये धार्मिक कर्तव्य निभाने के लिए अर्थात् जीवन कर्तव्यों का सदाचार से पालन करने के लिए जिनकी आवश्यकता होती हैं। इस प्रकार अर्थ जीवन का आवश्यक मूल्य है। कर्तव्यों

काम - सांसारिक सुखोपभोग एवं सन्तोनोत्पत्ति मनुष्य की महत्वपूर्ण आवश्यकता है, जिनकी प्राप्ति का प्रयास 'काम' नामक पुरुषार्थ के अन्तर्गत किया जाता है। 'काम' जीवन का महत्वपूर्ण मूल्य हैं। इसके अभाव में मनुष्य न तो धर्म सम्मत काम को ही धारण किया करते थे। काम का अनुसरण कर गृहस्थ जन जहाँ एक और सृष्टि के निर्माण में योग देते थे. वहीं दूसरी और वे सन्तानोत्पत्ति द्वारा 'पितृऋण' से भी मुक्ति प्राप्ति करते थे। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में इसी धर्मयुक्त काम को स्थान दिया है- धर्माविरुद्ध भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभा ।[3]

भारतीय चिन्तन में काम को मात्र ऐन्द्रिक सुख या यौन तुष्टि के अर्थ में नहीं लिया गया अपितु मानसिक प्रक्रिया तथा रागात्मिका वृत्ति के स्वीकार किया गया हैं। इसलिए 'काम' धर्म से संयुक्त होकर मोक्ष प्राप्ति में सहायक बनता है।

मोक्ष - भारतीय दर्शनानुसार मोक्ष जीवन का चरम लक्ष्य हैं। अतः जीवन मूल्यों की दृष्टि से मोक्ष का सर्वोच्च स्थान हैं। पुरुषार्थ के अर्थ में मोक्ष का अभिप्राय है- आत्मसाक्षात्कार । कठोपनिषद् में उल्लेख है कि मोक्ष कोई धनुष नहीं हैं, जिसे कोई भी अपने कन्धे से लटका लें। यह छुरे की धार के समान बहुत ही कठिन मार्ग है।" इसी प्रकार गीता में वर्णित है कि मोक्ष भक्ति मार्ग की अपेक्षा बहुत कठिन मार्ग है । "

मानव-व्यक्तित्व के संतुलित विकास के लिए एवं मानव जीवन के चरम साफल्य के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का समवाय ही उपास्य हैं इनमें से किसी एक के प्रति अत्यासक्ति अथवा उदासीनता मानव-जीवन से असंतुलन पैदा कर देती हैं।

पुरुषार्थो का प्रतिपादन भारतीय मीमांसकों की समन्वित दृष्टि, गहन अध्ययन तथा विशाल हृदयता का परिणाम हैं। ये चारों पुरुषार्थ मनुष्य की चहुँमुखी आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास हैं तथा इसके भीतर मानव जीवन का उद्देश्य एवं सार्थकता निहित हैं।

यह सत्य है कि हमारे जीवन मूल्यों में निरन्तर अधोपतन हो रहा है, किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं हैं कि हम अपने शाश्वत जीवन-मूल्यों को खो चुके हैं। हमारे जीवन-मूल्य आज भी अपने मूल स्वरूप में विद्यमान है, परन्तु नितांत भौतिकवादी और भोगवादी जीवन पद्धति ने उन्हें अज्ञानान्धकार से आवृत्त कर दिया है। कहा जाता है कि अन्धकार को चीरने के लिये रोशनी की एक किरण ही काफी होती है। हमारा प्राचीन भारतीय संस्कृत वाडमय मूल्यरूपी धनसम्पदा का 'आकार' व 'प्रकाश' का वह है दीप्यमान पुंज है, जो न केवल भारतवर्ष को, अपितु सम्पूर्ण विश्व को समृद्ध और आलोकित करने में समर्थ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नीतिशतकम्
2. मनुस्मृति
3. श्रीमद्भगवद्गीता
4. कठोपनिषद्
5. संस्कृत साहित्य की इतिहास